

सांख्यदर्शन में वर्णित अन्तःकरणत्रय की परिकल्पना एवं विश्व अभ्युदय



अतुल कुमार दुबे

(शोध छात्र)

संस्कृत विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

वैश्विक अभ्युदय एक अत्यन्त व्यापक अवधारणा है। इसे मात्र आर्थिक संवृद्धि, विज्ञान प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नति आदि संकुचित मानदण्डों में नहीं नापा जा सकता। ये वैश्विक अभ्युदय के कतिपय आधार अवश्य हो सकते हैं, यदि ये विवेक की वल्गा से संयमित और नियंत्रित हो। यह नितान्त सत्य है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने हमें मानव की अवस्था को सुधारने की अभूतपूर्व शक्ति दी है। अनेक यन्त्रों संयन्त्रों तथा औषधियों के निर्माण से मानव जीवन की कठिनाइयों को दूर करते हुये, जीवन को सरल व सरस बनाने, की शक्ति प्राप्त हुई है। लेकिन साथ ही इसने मानव सभ्यता को विनाश के मुहाने पर भी लाकर खड़ा कर दिया है।

क्या हम वास्तविक रूप से यह कह सकते हैं, कि हमने एक विकसित समाज का निर्माण किया है। आज एक चौथाई दुनिया तो पूर्ण सुविधा सम्पन्न है, वहीं तीन चौथाई भूखी-अधपेट। क्या हम एक ऐसे भूमण्डलीय-ग्राम (global Village) में रह सकते हैं, जहाँ करोड़ों लोग कुपोषण के कारण शरीर और मस्तिष्क के बौनेपन के और मौत के शिकार हो रहे हैं तो दूसरे करोड़ों लोग मोटापे और पेटपन से त्रस्त हैं। एक ओर करोड़ों लोगों के नाम मात्र की चिकित्सा भी उपलब्ध नहीं होती है, जबकि दूसरे करोड़ों को जरूरत से ज्यादा चिकित्सा मिल रही है। क्या हम दलितों और शोषितों की कराह अनसुनी करते हुये भी यह दावा कर सकते हैं कि हम एक सभ्य और विकसित समाज के निवासी हैं?

विज्ञान और प्रौद्योगिकी की महान् उपलब्धियों को नकारा नहीं जा सकता, किन्तु यह तथ्य भी सत्य है कि ये उपलब्धियाँ प्रभूत कीमत चुकाकर पाई गई है। औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् प्राकृतिक वातावरण का अभूतपूर्व संहार हुआ है। अपने वातावरण में मनोवांछित, परिवर्तन करने के मानव की क्षमता में अपार वृद्धि हुई है, किन्तु ज्ञान व विवेक में वैसी वृद्धि हुई ही नहीं। इस विभेद के फलस्वरूप हमारी धरती की बर्बर लूटपाट की गई वैश्विक तापन, ओजोन परत में छिद्र प्रदूषण, अनेक प्रजातियों का लोप ये सारी समस्यायें भी प्रौद्योगिकी विकास का दूसरा पहलू ही है।

क्या इन सब दुष्परिणामों के बावजूद भी हम कह सकते हैं, कि प्रौद्योगिकी विकास की यह दिशा हमें विश्व-अभ्युदय की ओर ले जाएगी। यदि नहीं, तो हमें एक नई दिशा की ओर बढ़ना होगा। हमें प्रतिस्पर्धा की बजाय पारस्परिकता की ओर, संघर्ष के बजाय समन्वय की ओर बढ़ना होगा। हमें मानवीय मन की सतत् विकृति का उपचार

करना होगा और मानवीय मन के नियन्त्रण की यही प्रविधि कठोपनिषद् में 'रथरूपक' द्वारा बताई गई है। कठोपनिषद् में कहा गया है कि इन्द्रिय के घोड़ों पर मन की लगाम, मात्र बुद्धि रूपी सारथी ही लगा सकता है।¹

यही पर पाश्चात्य विचारधारा की सीमा समाप्त हो जाती है, क्योंकि उनके पास मन और बुद्धि की अलग-अलग अवधारणायें ही नहीं हैं। उनके पास मात्र Mind है, जो कि चेतना मन और बुद्धि के कार्यों का समुच्चय है। Encyclopedia Britanica में mind को इस प्रकार परिभाषित किया गया है—

A mind is the complex of cognitive faculties that enables consciousness, thinking, reasoning perception and Judgement- a characteristic of human beings but which also may apply to other life forms.

इस प्रकार पाश्चात्य-विचारधारा में Consciousness (आत्मा), perception (मत) तथा Judgement (बुद्धि) को एक ही पलड़े में रख दिया गया है। तो कौन लगाम बने, और कौन सारथी। इस प्रकार बुद्धि व मन का प्राधान्य अप्राधान्यभाव ही तिरोहित हो गया। ऐसी अव्यवस्था का लाभ उठाकर मन, इन्द्रियों का सहयोग लेकर अपनी ही मनमानी करने लगता है तथा सम्यग्रूपेण कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय न हो पाने के कारण अनेक समस्यायें जन्म लेने लगती हैं।

इसके विपरीत भारतीय-दर्शन मुख्यतः सांख्य एवं वेदान्त में मन व बुद्धि के पार्थक्य का सम्यग्रूपेण विवेचन कर, प्राधान्य-अप्राधान्याभाव का निर्धारण भी किया गया है, ताकि मन की लगाम की 'बुद्धि' (सारथी) के हाथों में सौंपा जा सके। इस प्रक्रिया के सम्यक् बोध हेतु अन्तःकरणत्रय की अवधारणा को भलीभाँति समझना आवश्यक है।²

सांख्य-दर्शन में "अन्तःकरणं त्रिविधं"³ कहकर मन, अहंकार व बुद्धि, तीन अन्तःकरण बतलाये गये हैं। मूलप्रकृति (बुद्धि), महत् से अहंकार तथा अहंकार से मन (अन्तरिन्द्रिय) तथा 10 इन्द्रियों की सृष्टि बताई गई है।⁴ सृष्टि प्रक्रिया के अनन्तर मन, बुद्धि व अहंकार का लक्षण उनके व्यापार के आधार पर किया गया है सांख्यकारिका की 27वीं कारिका में मन को इस प्रकार परिभाषित किया गया है—

उभयात्मकमत्र मनः, संकल्पकमिन्द्रियं व साधर्म्यात्। अर्थात् मन को 'संकल्पक इन्द्रिय कहा गया है। 'संकल्प' को समझाते हुए 'तत्त्वकौमुदीकार' कहते हैं कि पहले लोगों को वस्तु का अविविक्त या अविकल्पित अर्थात् सामान्य-विशेष से रहित ज्ञान होता है। सामान्यतः यह ज्ञान निर्विकल्पक- प्रत्यक्ष कहा जाता है। फिर मन के द्वारा सामान्य व विशेष विकल्पों से युक्त अर्थात् सविकल्पक-रूप में उसका प्रत्यक्ष होता है। इस प्रकार मन के द्वारा यह वस्तु ऐसी है, ऐसी नहीं' - इस प्रकार से उनका संकल्प अर्थात् विशेषण-विशेष्य (यह घटत्व-विशिष्ट घट है, इत्यादि) रूप से विवेचन या स्पष्ट ज्ञान होता है।⁵ अर्थात् मन वस्तु का मात्र निर्विकल्पक से सविकल्पक प्रत्यक्ष करारकर विरत हो जाता है। अर्थात् मन के द्वारा होने वाला ज्ञान, केवल Information होता है (knowledge) नहीं।

यह सविकल्पक-प्रत्यक्ष (Information) मन द्वारा अपने कारणभूत 'अहंकार' को सौंप दिया जाता है। अभिमान को ईश्वरकृष्ण 'अभिमानोऽहंकारः' कहकर परिभाषित करते हैं।⁶ मन द्वारा ग्रहीत इस Information के साथ अभिमान (अर्थात् ज्ञान से अहन्ता) जुड़ जाता है और 'जो यह गृहीत विषय और विचारित विषय है, इसमें मैं ही अधिकृत हूँ, मैं ही इसे करने में समर्थ हूँ, ये विषय मेरे ही लिये हैं' ऐसा ज्ञान कराने लगता है।⁷

यह 'अभिमान मिश्रित सविकल्पक प्रत्यक्ष अहंकार द्वारा अपने कारणभूत 'बुद्धि' को प्रदान किया जाता है। यहीं पर (बुद्धि में), वेदों व अन्यशास्त्रों के अध्ययन, गुरुजनों व वृद्धजनों के कथन तथा पूर्वानुभव के संस्कारों के आधार पर कर्तव्याकर्तव्य विवेचन होता है। इसी कर्तव्याकर्तव्य-विवेचन के आधार पर हानोपादानोपेक्षाबुद्धि उत्पन्न होती है और 'यह मेरे द्वारा करणीय है', ऐसा निश्चयात्मक ज्ञान होता है। इसी निश्चयात्मक ज्ञान को 'अध्यवसाय' कहा जाता है तथा यही 'अध्यवसाय', बुद्धि का असाधारण व्यापार (लक्षण) बताया गया है।⁸ यही अध्यवसाय वास्तविक ज्ञान (Knolwedge) है।

उपर्युक्त पूरी प्रक्रिया से करणों (पाँच ज्ञानेन्द्रियों, पाँच कर्मेन्द्रियाँ तथा मन, बुद्धि व अहंकार में अन्तःकरणों का तथा अन्तःकरणों में बुद्धि का प्राधान्य स्पष्ट है, फिर भी ईश्वरकृष्ण सांख्यकारिका में बाह्येन्द्रियों से अन्तःकरण का⁹ तथा अन्तःकरण में बुद्धि का प्राधान्य¹⁰ शब्दशः कथित करते हैं। सांख्य-दर्शन का पूरा आग्रह है कि अन्तःकरणत्रय में बुद्धि के प्राधान्य का सम्यक् स्पष्टीकरण ने किये जाने से मनोवैज्ञानिक अव्यवस्था उत्पन्न हो जायेगी, जो कि समष्टि की उन्नति (विश्व-अभ्युदय) में बाधक है। यही कारण है उपर्युक्त प्रक्रिया से बुद्धि का प्राधान्य समझाकर उस प्राधान्यभाव का शब्दशः कथन किया गया है।

इस प्राधान्य-अप्राधान्यभाव के लाभ को एक बहुत छोटे से उदाहरण से समझा जा सकता है। शरीर कोई नीति-नियम नहीं मानता। शरीर के धरातल पर मानव भी पशु जैसा है। लेकिन मन द्वन्द्व में होता है, मन के पास पशुओं जैसी वासना है तथा मनुष्य के संस्कार भी हैं। अब यदि किसी व्यक्ति को भूख लगी है, तो शरीर तो कहेगा चोरी कर लो, कोई हर्ज नहीं है क्योंकि विषय-भोग बाह्य इन्द्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति है, लेकिन मन बैचेनी अनुभव करेगा, क्योंकि मन, बाह्यइन्द्रियों से भी जुड़ा है तथा अहंकार से भी। अहंकार कहेगा कि अगर चोरी करते पकड़ लिये गये तो बड़ी बदनामी होगी। ऐसी स्थिति में मन यह कहेगा कि अगर चोरी करनी है तो इस ढंग से करो कि पकड़े न जाओ। लेकिन भीतर बुद्धि है और भी गहरे में-सर्वप्रधान। वह कहेगी कि इससे कोई सम्बन्ध नहीं कि तुम पकड़े गए या नहीं पकड़े गये। चोरी की, तो गलत हुआ और बुद्धि को कांटा चुभता रहेगा। न भी पकड़े गये तो भी बुद्धि पीड़ा देगी कि बुरा हुआ। यही पीड़ा मनुष्य के बुरे कर्मों पर अंकुश लगाएगी। ऐसी स्थिति में व्यक्ति यदि सांख्यसम्मत-त्रयोदशकरण-प्रधानबुद्धि की बात मान लेता है तो वह गलत निर्णयों (चोरी) से भी बच जाएगा तथा बुद्धि द्वारा प्राप्त पीड़ा से भी।

किन्तु पाश्चात्य विचारधारा में तो मन या बुद्धि की पृथक्-पृथक् अवधारणायें ही नहीं हैं, तो फिर प्राधान्य-अप्राधान्यभाव का निर्धारण कैसे हो? ऐसी अवस्था में मनुष्य, अव्यवस्था का शिकार हो जाता है तथा कई बार मन के अनुसार कार्य करने लगता है, जो कि व्यक्ति को गलत दिशा में ले जाता है।

यह बात जितनी व्यक्ति के लिये सत्य है, उतनी ही समाज के लिये भी, क्योंकि जो प्रत्यय, व्यष्टि के हो सकते हैं, वही प्रत्यय समष्टि के भी हो सकते हैं। इसलिये जब कोई समाज, मन की लिप्सा से प्रेरित होकर, बुद्धि की वल्गा से नियन्त्रित हुये बिना तथाकथित विकास की राह पर दौड़ पड़ता है तो उससे ऐसे भयंकर अपराध हो जाते हैं जिनका दंश वर्तमान समाज को भी भोगना पड़ता है तथा भविष्य भी उस दंश से सदैव पीड़ित रहता है।

औद्योगिक विकास के मार्ग पर अनियन्त्रित दौड़ के दुष्परिणाम अनेक रूपों में विश्व के सम्मुख उपस्थित हुये हैं। यूरोप में सर्वप्रथम प्रारम्भ हुई औद्योगिक क्रान्ति का खामियाजा नार्वे तथा स्वीडन को 'अम्ल-वर्षा' के रूप में भुगतना पड़ा है। वैश्विक वातावरण अत्यन्त दूषित हो गया है तथा प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधन धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। इन्हीं समस्याओं से निपटने के लिये दो अवधारणायें आयीं— (1) पर्यावरण मित्र-तकनीक तथा (2) सतत् विकास की अवधारणा। वर्तमान स्थित को देखें तो सतत् विकास की दशा में कोई बहुत महत्वपूर्ण कार्य नहीं हुआ है। किन्तु पर्यावरण के हित के लिये कार्बन के उत्सर्जन को कम करने के लिये 'कार्बन ट्रेडिंग' का विकसित देश तो लाभ ले पा रहे हैं, वहीं पिछड़े देश और भी पिछड़ते जा रहे हैं। इस प्रकार विकास समावेशी नहीं हो पा रहा है। इस असमावेशी विकास को 'अभ्युदय' नहीं कहा जा सकता। अतः स्पष्ट हो जा रहा है कि हम एक पक्ष सुधारने जाते हैं, तो दूसरा पक्ष बिगड़ने लगता है।

सूक्ष्मता से विचार करने पर ज्ञात होता है कि इस प्रकार के समाधान 'मन' व 'अहंकार' के स्तर पर हैं, बुद्धि के स्तर पर नहीं। कोई देश इसलिये कार्बन का उत्सर्जन कम करेगा, क्योंकि ज्यादा उत्सर्जन करने पर उसे जुर्माना देना होगा, अतः जो देश धनी हैं वे कार्बन के उत्सर्जन को कम नहीं करते, क्योंकि वे दूसरे देशों से 'कार्बन क्रेडिट' खरीद लेते हैं। किन्तु यदि बुद्धि के तल पर वह समाज चिन्तन करें तो स्वतः उसे कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान हो जाएगा, तथा दुष्परिणामों को देखते हुए वह विकास तथा विनाश में स्वतः सामंजस्य बिटाने का प्रयास करेगा तथा यह समाधान 'कार्बन ट्रेडिंग' से ज्यादा कारगर भी होगा एवं उससे समावेशी विकास की अवधारणा को भी चोट नहीं पहुँचेगी। इस प्रकार समाज यदि मन के तल पर जीना छोड़कर, बुद्धि के तल पर जीने लगे तो सतत् विकास, समावेशी विकास तथा पर्यावरण सुरक्षा जैसी समस्यायें सुगमता से हल हो सकती है। इन समस्याओं के हल हो जाने पर ही वास्तविक वैश्विक अभ्युदय सम्भव हो सकेगा।

ऊपर 'कार्बन ट्रेडिंग' के उदाहरण से यह समझाने का प्रयास किया गया कि समस्यायें जितनी गहरी है, समाधान भी उतने ही गहरे होने चाहिये। यह ठीक वैसा ही है, जैसे किसी व्यक्ति को मलेरिया के कारण बुखार हुआ हो और उसे मलेरिया की दवा न देकर मात्र बुखार की दवा दी जा रही हो। ऐसी स्थिति में मरीज को स्वास्थ्य लाभ तो नहीं होगा, बल्कि वह और बीमार होता चला जाएगा। यही कारण है कि आज का विश्व, अभ्युदय के बजाय अस्त होने के ज्यादा करीब है। आज का समाज मन के तल पर ही रहा है तथा मन के तल पर ही समस्याओं के समाधान भी खोजे जा रहे हैं। ऐसे समाधान तात्कालिक समाधान हो तो सकते हैं, किन्तु उनके दूरगामी परिणाम अत्यन्त भयानक होते हैं।

अतः आवश्यकता है कि आज विश्व, मन के तल पर नहीं, वरन् बुद्धि के तल पर जीना प्रारम्भ करे। किन्तु इनके लिये मन व बुद्धि की अलग-अलग अवधारणाओं को मानना पड़ेगा, जिसके लिये पाश्चात्य विचारधारा ने संभावना ही नहीं छोड़ी है। इसलिये हमें पौर्वात्य-दर्शन की ओर लौटना होगा, उपनिषदों की ओर लौटना होगा, वेदों की ओर लौटना होगा।

विज्ञान के जलधि-मन्थन ने हमें अनेक रत्नों से विभूषित किया है, लेकिन साथ में मन्थन से निकला हलाहल भी विश्व को त्रास दे रहा है। इस हलाहल का शमन बुद्धि के (अधिष्ठाता देव शिव) द्वारा ही किया जा सकता है, अन्य किसी के द्वारा नहीं, अतः मनुष्य को तथा समाज को मन के तल से बुद्ध के तल पर छलांग लगानी होगी। यह तभी सम्भव है जब हमें मन व बुद्ध के भेद को स्पष्टतया समझें, विश्वास करें तथा तदनुसार आचरण करें, अन्यथा मन से बुद्धि तक छलांग सम्भव ही न हो सकेगी। समाज के बुद्धि के तल पर जीने से 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसी व्यापक अवधारणा का विकास ही ग्लोबलाइजेशन जैसी संकुचित विचारधारा के स्थान पर होगा तथा वास्तविक वैश्विक-अभ्युदय सम्भव हो सकेगा।

सन्दर्भ-

1. आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धि तु सारथि विद्धि मनः प्रग्रहमेव च। कठोपनिषद्-तृतीयवल्ली, प्रथम अध्याय, श्लोक-3
2. प्रक्रिया के सरलीकरण सम्यक् स्पष्टीकरण हेतु यहाँ सांख्य-सम्पन्न अन्तःकरणत्रय की अवधारणा को ग्रहण किया गया है।
3. सांख्यकारिका-33
4. प्रकृतेर्महास्ततोऽहंकारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः।-सांख्यकारिका-22
सात्त्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकृतादहंकारात्।-सांख्यकारिका-24 द्रष्टव्य तत्त्वमौमुदी टीका
5. आलोचितमिन्द्रियेण वस्तु 'इदम्' इति सम्मग्धम् 'इदमेवं' नैवम्' इति सम्यक् कल्पयति विशेषण-विशेष्य भावेन विवेचयतीतियावत्।- सांख्यतत्त्वकौमुदी-27 की व्याख्या।
6. सांख्यकारिका-24
7. यत खल्वालोचितं मं च तत्र अहमाधिकृतः शक्तः खल्वहमत्र, मदर्था एवामी विषयाः मत्तो नान्योऽत्राधिकृतः कश्चिदस्ति, अतोऽहमस्मि, इति योऽभिमानः सोऽसाधारणव्यापारत्वादहंकारः।- सांख्यकारिका की 24वीं कारिका की तत्त्वकौमुदी व्याख्या।
8. अध्यवसार्यो बुद्धिः।-सांख्यकारिका-3
9. सान्तःकरणा बुद्धि सर्व विषयमवगाहते यस्मात्।
तस्मात् विविधं करणं द्वारि द्वाराणि शेषाणि।-सांख्यकारिका-35
10. एते प्रदीपकल्पाः परस्परविलक्षणा गुणविशेषाः।
कृत्स्नं पुरुषारथ प्रकाश्य बुद्धौ प्रयच्छन्ति।-सांख्यकारिका-36